International Journal of Education and Science Research Review
E-ISSN 2348-6457
Volume-1, Issue-6 December- 2015 P-ISSN 2349-1817
www.ijesrr.org Email- editor@ijesrr.org

दलित साहित्य की अन्तः वेदना

परस राम पंचोली
व्याख्याता हिन्दी
राजकीय शास्त्री संस्कृत महाविद्यालय , चेचट (कोटा)

हिंदी साहित्य के इतिहास में दलित साहित्य की अपनी विषिष्ट पहचान है। भारतीय साहित्य में इस साहित्य ने अपनी समस्याओं के साथ दस्तक दी है। भारतीय समाज परिवर्तन की विभिन्न प्रक्रियाओं से गुजर रहा है। राजनैतिक सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक तथा धार्मिक परिवर्तनों को लंबे समय तक भारतीय समाज ने अपने ऊपर झेला है। आज व्यवस्था परिवर्तन का युग चल रहा है। दलित साहित्य समाज में अपनी स्वतंत्र पहचान बनाने में लगा है। यह सर्वमान्य सत्य है कि जिस कौम और समाज का अपना साहित्य है उस समाज और कौम का अपना सम्मान है, उसकी अपनी पहचान है। भारत में ब्राह्मण वर्ग का वेद, रामायण, महाभारत आदि का अपना साहित्य है, इसलिए उनका अपना सम्मान है। जब तक दलितों के पास अपना साहित्य नहीं था, तो उनका मान भी नहीं था तथा अपनी पहचान भी नहीं थी और वे समाज में हाषिए पर थे। भारतीय समाज व्यवस्था पर वैदिक काल से वर्णव्यवस्था का प्रभाव था। जिससे समाज में निम्नस्थान ग्रहण करनेवाला वर्ग अपना अलग स्थान मानकर मुख्यधारा से अलग हो गया था। वस्तुतः यह वर्ग समाज का बहुत बडा हिस्सा था।

1. प्रस्तावना

भारतीय समाज जीवन का दलित एक महत्त्वपूर्ण अंग है। दलित साहित्य इसलिए दलित वर्ग के लिए महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि यह दलितों के गौरवपूर्ण इतिहास को बताता है। राष्ट्र निर्माण में दलितों के योगदान का सही लेखाजोखा दलित साहित्य से ही प्राप्त होता है। राष्ट्रीय एकता को प्रदर्षित करनेवाला साहित्य दलित

साहित्य है। यह समाज में व्याप्त गलत धारणाओं को जड से समाप्त करके भ्रातृभाव का संदेष देता है। सदियों से दलितों को इतना उपेक्षित कर दिया है कि आज दलित साहित्य में आक्रोष विक्षोभ की भावना, प्रतिहिंसा और सदियों से संताप की कसक दिखाई देती है।

हिन्दी साहित्य में 'दलित साहित्य' आज चर्चा के केन्द्र मे है। दलित साहित्य की अवधारणा क्या है? दलित लेखक कौन और किसे माना जाना चाहिए? दलित साहित्य, साहित्य की श्रेणी में आता है अथवा

नहीं? सौन्दर्यशास्त्र के मानदंडों पर वह खरा उतारता है अथवा नहीं। इन सभी सवालों के साथ दलित साहित्य और लेखकों, चिंतकों का दोहरा संघर्ष चल रहा है।

हिन्दी साहित्य में जिस सत्ताधारी और वर्चस्ववादी विचारधारा का आज तक प्रभाव और प्रभुत्व रहा है, उसके लिए हाशिये पर स्थित, बहिष्कृत करार दिए गए समाज द्वारा साहित्य जैसे विशिष्ट क्षेत्र में दखल देने पर ऐतराज करना उनकी नजर में स्वाभाविक ही था।

धर्माधिष्ठित वर्ण व्यवस्था और जातिव्यवस्था द्वारा जिनका समाज में एक निश्चित स्थान बना दिया हो, जन्मना ही जिसका सामाजिक स्तर आर्थिक स्थिति और सांस्कृतिक दायरा तय कर दिया हो, मानवीय अधिकारों से वंचित रखकर एक तंग दायरे में रहते हुए संकुचित सोच के साथ जीने की आदत डाली हो। क्या वही इन्सान चेतनशील होकर आज धर्म ब्राह्मणव्यवस्था की पैदाईश सामंतवाद पूंजीवाद, जातिवाद और शोषण के विरोध में संघर्ष के लिए उठ कर खड़ा हुआ है? सामाजिक बदलाव की भाषा के साथ नए समतामूलक समाज व्यवस्था की स्थापना करने के लिए प्रतिबद्ध हो चुका को, तो यह प्रश्न उनके लिए आश्चर्य की ही बात होगी। जो सदैव सत्ताधरी, संपत्तिशाली और श्रेष्ठतम बने रहने के लिए आजीवन प्रयास करते रहे हैं, और अपने श्रेष्ठत्व को मनवाने के लिए एक ऐसे दास वर्ग का निर्माण करके उसे उसी तरह बनाए रखने में जी जान से जुटे हुए हों। क्या वे यह मान सकते हैं कि कल तक बेजुबान बना रहा अमानवीय उत्पीड़न और अपमान को सहते रहने के बाद भी बोल नहीं सका, आज अपने शब्दों में प्रलयंकारी तेज भर कर, उस अमानवीय उत्पीड़न, अधिकारों के हनन और अपमान, अवहेलना, वेदना का हिसाब मांग रहा है। जाहिराना तौर पर उसके जीवन को नरकतुल्य बनाने वालों से सवाल कर रहा है। गलीज और दरिद्र जीवन को उसके हिस्से में जबरदस्ती थोपने वाली धर्म और जाति व्यवस्था की चीरफाड़ कर रहा हो। अपने अस्तित्व के प्रति भान आए इस चेतनाशील साहित्य की ही एक शक्तिशाली विधा 'दलित आत्मकथन' की कुछ मुख्य विशेषताओं पर चर्चा करें।

दलित आत्मकथन आज दलित समुदाय के विविध आयामों को अपने अंदर समेटकर शोषण के हर उस पहलू की एक समाजशास्त्र की चिकित्सक दृष्टि से चीरफाड़ करके सामाजिक व्यवस्था और उसके अंर्तसंबंधों की पड़ताल करता हुआ दिखाई देता है। दलित आत्मकथाओं में उपस्थित समस्या और प्रश्न व्यक्तिगत संदर्भों से नहीं बल्कि समुदायगत संदर्भों से जुड़कर उभरते है। जब दलित रचनाकर अपने जीवन अनुभवों के माध्यम से दलित जीवन की त्रासदी को रचनात्मक अभिव्यक्ति देता है तो वह संपूर्ण दलित समुदाय के सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक सरोकारों को उजागर करता है। हिन्दी दलित साहित्य में आत्मकथन की विधा के अंतर्गत समाहित रचनाएँ अभी संख्या में कम हैं, लेकिन सैकड़ों हिन्दी साहित्य की रचनाएँ जहाँ दलित जीवन की वास्तविकता को उसके सच्चे रूप में अभिव्यक्ति देने में सक्षम नहीं हो सकती, वहाँ केवल एक दलित आत्मकथन संपूर्ण व्यवस्था और उससे जुड़ी शोषण–संस्थाओं के शोषण, जटिलता, घृणित परंपरा और साजिशों को हमारे समक्ष खोलकर देख

देती है। जैसे भारतीय साहित्य में दलित साहित्य का आरंभ मराठी दलित साहित्य द्वारा हुआ या वैसे ही आत्मकथानात्मक रचनाओं की शुरुआत सबसे पहले मराठी दलित साहित्य में हुई है।

2. दलित साहित्य

साहित्य को समाज का दर्पण कहा जाता है। साहित्य में तद्युगीन समाज का प्रत्येक वर्ग, प्रत्येक स्थिति किसी–न–किसी रूप मे ं परिलक्षित होती है।

उसमे ं सामा जिक जीवन, व्यवस्था, सामा जिक समस्या तथा उस पर उपायों की चर्चा होती है। जाति–व्यवस्था, मानवीय असमानता, शोषण के प्रति विद्रोह इत्या दि स्थितियों को चित्रित करने वाला सा हित्य, समाजवादी समाज रचना एवं प्रगतिवादी चेतना से प्रभा वित है। वर्तमान समय में नारी विमर्श और दलित विमर्श बहुचर्चित विषय हैं। वर्तमान में ही नहीं अपितु महात्मा फूले, शाहू, अम्बेडकर जैसे समाज सुधारकों ने भी सामा जिक व्यवस्था पर करारा व्यंग्य किया है। शोषित, अपमानित दलित अस्मिता, अधिकार की रक्षा के लिए संघर्ष करने लगा।

सामान्यतः दलित समाज के जीवन से जुड़ी रचना – 'दलित सा हित्य'। जाति–व्यवस्था को नकारने वाला, शोषित मानव की व्यथा बताने वाला साहित्य 'दलित साहित्य', दबे कुचले लोगों की वाणी दलित साहित्य, विद्रोही, संघर्षरत मानव की आत्मवेदना दलित साहित्य है। दलित द्वारा लिखी गई दलितों की मर्मवेदना को दलित सा हित्य माना गया है। इसके विपरीत गैर दलितों द्वारा परानुभूति के बल पर शोषित मानव का किया अंकन भी दलित सा हित्य ही है।

दलित सा हित्य जैसे आन्दोलन को समझने के लिए और उसकी सही पहचान करने के लिए इसके सकारात्मक और नकारात्मक दोनों पक्षों पर विचार करना अनिवार्य है क्योंकि 'दलित' के विषय में लोगों की जो अवधारणा है, दलित उससे भिन्न हैं। दलित सा हित्य स्था पित सा हित्य से विद्रोह करता हुआ प्रतीत हा ेता है, वह समाज मे ं अपनी स्वतंत्र अस्मिता की तलाश करता हुआ नजर आता है, अपने अस्तित्व को खोजता है। दलित सा हित्य हिन्दी साहित्य का प्रति साहित्य है। इस धारा का विकास नकार आक्रोश और विद्रोह के त्रिकोण पर हुआ है। सर्वप्रथम दलित सा हित्य शब्द का प्रयोग डॉ . भीमराव अम्बेडकर ने सर्वप्रथम दलित साहित्य सेवक संघ में किया। बाद में दलितों के उत्थान और दलितों की समस्याओं के संबंध में जो कुछ लिखा गया दलित सा हित्य कहा गया। दलित सा हित्यकारो ं के अनुसार दलित सा हित्य दलित अनुभवों की अमूल्य निधि है। दलित सा हित्य को व्यापक रूप से परिभाषित करते हुए प्रसिद्ध दलित साहित्यकार ओमप्रकाश वाल्मीकि कहते हैं – 'दलित सा हित्य का बिन्दु विवेकहीन नहीं है बल्कि उसकी अन्तः चेतना का हिस्सा है जो समकालीनता की अवधारणाओं को दृढ़ता प्रदान करता है। वह जड़ता के विरूद्ध समय की जरूरत के साथ प्रतिबद्धता और बदलाव की प्रक्रिया के प्रति सचेत है। इसलिए एक नई चेतना का उन्मेष दलित साहित्य की

अवधारणाओं का विशिष्ट अंग है। इसी आधार पर दलित सा हित्य का सौंदर्यशास्त्र विकसित हो रहा है।

जाति–व्यवस्था का विरा`ध करते हुए हिराडोम, रैदास, कबीर जैसे भक्तों, कवियो ं ने अपनी बा`ली मे ं रचनाएँ लिखी। महात्मा फूले, शाहू, अंबेडकर जैसे समाज सुधारकों ने समाज–व्यवस्था पर करारा व्यंग्य किया। शोषित, अपमा नित दलित अपनी अस्मिता और अधिकार के लिए संघर्ष करने लगा। महाड़ आन्दोलन, मिर्चपुर कांड, कालाराम मंदिर प्रवेश, मनुस्मृति जलाना, माणगांव परिषद् दलित छात्रावास एवं आरक्षण सुविधा आदि इसके प्रमाण है। शिक्षा के प्रचार–प्रसार से दलित अपनी व्यथा, चिंता एवं अपनी स्थिति को शब्द बद्ध करने लगा और इस प्रकार साहित्य का सृजन आरंभ हुआ। हजारों बरसों से दबी भावधाराएँ ं, लावा बनकर भ्रष्ट व्यवस्था को ध्वस्त करने के लिए कार्यरत हैं, समता, समानता, बंधुता का प्रचारक सा हित्यकार समाज तथा सामा जिक अस्मिता से जुड़ा रहा। दलित साहित्यकारों ने सबसे पहले मनुष्यत्व, मानव की खोज की है।

सा हित्य की यह परम्परा इतनी दृढ़ रही कि मध्ययुग के भक्तिकाल में रैदास और दादू आदि निम्न वर्गों में जन्मे कवि रचनाकार भी आये। किन्तु वे वही गाते कहते रहे जो उच्चवर्गीय रचनाकार गाते कहते आये थे, इस स्थिति में मुक्त हो पाना अत्यंत कठिन था, हिन्दी में कबीर ने एक विद्रोहात्मक टेर लगाई अवश्य, किन्तु उनकी वाणी भी रहस्य के झिलमिल झरोखे में सिमटकर रह गई। दलित सा हित्यकार ऐसे ही अनेक बातें करता है। स्थापित सा हित्य के विज्ञान से वह इनकार नहीं करता किन्तु वहॉ विज्ञान इतना कम है कि मोटेतौर से देखने पर ऐसा लगता है कि 'दलित सा हित्य' स्थापित से सम्पूर्ण विद्रोह करता है।

सत्य तो यह है कि यातना ग्रस्त व्यक्ति को चीखने से कोई नहीं रोक सकता और दलित सा हित्य एक स्तर पर यातना से पैदा हुई उस चीख का ही सा हित्य है। दलित सा हित्य का केंद्र बिन्दु मनुष्य है। मनुष्य की मुक्ति उसको महानता और महत्त्व देने के लिए, उसके उत्कर्ष के लिए, समता, स्वतंत्रता, बंधुत्व तथा सभी तरह के भेदभाव मिटाने एवं जन जागरण, जनचेतना पैदा करने के लिए दलित सा हित्य हथियार की तरह प्रयोग हो रहा है। रमणिका गुप्ता का मानना है कि – दलित साहित्य परंपरावादी सा हित्य के लिजलिजेपन और बासीपन तथा एक रूपी रसवादी प्रण ाली से भिन्न है इसके दायरे में अंध विश्वास, भाग्य, धर्म–कर्म या भगवान नहीं आते। इसी वैचा रिकता पर आधारित मार्क्सवादी सा हित्य, जनवादी सा हित्य, नीग्रो साहित्य भी खड़ा है।

स्वातंत्र्योत्तर हिंदी साहित्य में दलित साहित्य का आगमन होकर अब लगभग एक दशक पूर्ण हो रहा है। हिन्दी साहित्य जगत में इसके आगमन का बहुत स्वागत नहीं हुआ। 'साहित्य भी क्या दलित होता है? दलितों द्वारा लिखा गया, इसलिए इसे दलित साहित्य कहा जाए, यह साहित्य के तमाम मूल्यों को क्यों

तोड़ रहा है।? तमाम सवाल इस दलित साहित्य की निर्माता के साथ–साथ हिन्दी साहित्यकारों द्वारा उठाए जाते रहे हैं। हिंदी साहित्य की पवित्रता को अब बनाए रखने की कोशिशों में कुछ न कहा जाए, यह साहित्य लालूवाद फैलाने जैसे है।

हिन्दी साहित्य की प्रगतिशील धारा ने भी समाज के इस बहिष्कृत किए गए तबके की जातिगत समस्याओं को उजागर करने का प्रयास नहीं किया। बल्कि मार्क्सवादी दर्शन के प्रभाव में जातिगत मूलभूत समस्या को आधार के स्थान पर अधिरचना में रखकर देखने से मूल समस्या को जानबूझकर समझने का प्रयास नहीं किया। दलितों क सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक व राजनीतिक शोषण की उत्पत्ति का सीधा संबंध जाति के साथ है क्योंकि यहाँ जाति जन्मना है कर्मणा नहीं। जन्म और कर्म सिद्धांत के झूठे फैलाए जाल में फंसकर ही तो दलित समाज सदियों तक अपना प्रारब्ध मानकर चुपचाप अमानवीय अत्याचारों को सहता रहा।

3. निष्कर्ष

अबला को सबला बनाने वाला, शोषित को मुक्ति देने वाला, अपमानित को सम्मान दिलाने वाला, मूक को वाणी देने वाला, निम्न को ऊँचा स्तर पर बिठाने वाला, अनंत मानव का साहित्य, दलित साहित्य है। भेदभाव रहित समाज का निर्माण करने वाला यह साहित्य आधुनिक युग की देन है। अंबेडकरी विचार से प्रभावित यह साहित्य आज नई व्यवस्था का प्रेरणा स्रोत है। पर ंपरागत नैतिक, धार्मिक, पाख ंडी मान्यता को हटाने वाले नए साहित्य का यह रूप है। दलित साहित्य मानवता का पक्षधर होने के साथ समता का प्रचारक है। जाति को ध्वस्त करके मानव समाज का निर्माण करने वाला प्रगतिवादी, समाजवादी विचारों का प्रतिपादक है। काल्पनिकता की अपेक्षा यथार्थ की भूमि पर खरा उतरने वाला मानवी मन का सच्चा प्रेमी, आत्मा की आवाज 'दलित साहित्य' है। यह विशिष्ट जाति, पंथ, धर्म का न हा`कर समस्त शोषित, पीड़ित उपेक्षित, शापित मानव का साहित्य–वृद्ध साहित्य है।

सहायक ग्रंथ सूची

- दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र – शरण कुमार लिंबाने, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण–2005ए पृ॰ 106
- वही पृ॰ 106
- वही पृ॰ 106
- दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र – ओमप्रकाश वाल्मीकि, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, दूसरा संस्करण–2008एपृ॰ 48

- वही पृष्ठ 48
- वही पृष्ठ 48.49
- दलित साहित्य और राजनीति –संपादक एन. सिंह, अनामिका पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स लिमिटेड, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण–1017ए पृष्ठ 234
- हिंदी साहित्य कोष (भाग –1) – संपादक – डॉ धीरेन्द्र वर्मा , ज्ञानमण्डल, लिमिटेड , वाराणसी
- दलित साहित्य का सौन्दर्यशास्त्र – ओमप्रकाश वाल्मीकि , राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, दूसरा संस्करण–2008, पृष्ठ 48
- दलित साहित्य और राजनीति – संपादक एन. सिंह, अनामिका पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स लिमिटेड, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण–1017ए पृष्ठ 247
- दलित साहित्य का सौन्दर्यशास्त्र – ओमप्रकाश वाल्मीकि , राधाकृष्ण प्रकाशन , नई दिल्ली, दूसरा संस्करण–2008